ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2015; 1(5): 81-84
www.allresearchjournal.com
Received: 26-03-2015
Accepted: 11-04-2015

किरण ग्रोवर
एसो॰ प्रो॰, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, डी॰ ए॰ वी॰ कॉलेज, अबोहर।

Correspondence:
किरण ग्रोवर
एसो॰ प्रो॰ ,स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, डी॰ ए॰ वी॰ कॉलेज, अबोहर।

वर्तमान उपन्यासों में विखंडनवादी चिन्तन का अनुचिन्तन

किरण ग्रोवर

सारांशः– वास्तव में विमर्श शब्द सोच विचार, विचार–विनिमय,चिन्तन मनन, विवेचन, को द्योतित करता है। विगत दो दशकों से विमर्श की संकल्पना साहित्य मीमांसा में प्रयुक्त हो रही है। विखंडन शब्द नकारात्मक सोच विचार व व्यवहार का द्योतक है। मूल्य की टूटन,भ्रष्टाचार, अनाचारपूर्ण व्यवहार विखंडनवादी मानसिकता को जन्म देती हैं। विखंडनवादी मानसिकता कभी कभी व्यक्तिगत जीवन की कुंठाओं के कारण उभरती जाती है। जीवन की अर्थहीनता का बोध भी विखंडित विचारों को जन्म देता है। पात्रों के आचरण व व्यवहार को लेकर नकारात्मक व विध्वंसक कार्य के सम्बन्ध में जसे विचार चिन्तन प्रस्तुत हो रहा है, वही विखंडन विमर्श है।वर्तमान रचनाकारों भीष्म साहनी, गुलशेरखान शानी, मनोहर श्याम जोशी, सुरेन्द्र वर्मा, भगवान सिंह, ज्ञान चतुर्वेदी, चित्रा मुद्गल, कमलेश्वर, चन्द्रकांता, मैत्रेयी पुष्पा के चिन्तन से स्पष्ट होता है कि समाज में एक ओर विखंडित विचार पनप रहे हैं तथा दूसरी ओर विखंडित परिवेश भी। सामाजिक परिवेश के परिणामस्वरूप ही विखंडन की प्रवृत्ति पनप रही है जो स्वस्थ सामाजिक माहौल प्रदान करने के लिए एक कड़ी चुनौती बन गई है।

बीज शब्दः– विखंडनवादी, विमर्श, अनुचिन्तन, संकल्पना।

मूल प्रतिपादनः– मूल प्रतिपादनः–वर्तमान में जब साहित्य परिचर्चा होती है तो 'विमर्श' शब्द स्वतः बहस के केन्द्र में आ जाता है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से 'विमर्श' शब्द अत्यन्त प्राचीन है। 'विमर्श' का अर्थ है–सोच विचार कर तथ्य या वास्तविकता का पता लगाना, किसी बात या विषय पर कुछ सोचना, समझना, विचार करना, गुण–दोष आदि की आलोचना या मीमांसा करना, जांचना और परखना, किसी से परामर्श या सलाह करना, ज्ञान।[1] विमर्श' शब्द अत्यंत व्यापक है, जिसकी उत्पत्ति मृश् धातु में वि–उपसर्ग तथा घञ् प्रत्यय लगाकर हुई है। अतः 'विमर्श' शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ विचार–विमर्श, सोचना, समझना, आलोचना करना है। नालन्दा विशाल शब्द सागर में विमर्श को, "किसी बात का विचार या विवेचन, आलोचना, समीक्षा, परीक्षा, परखने का काम परामर्श, सलाह, अधीरता, असंतोष।"[2] के अर्थ में लिखा गया है। मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश में 'डेलीबरेट' का अर्थ, सुचिंतित, जानबूझकर किया गया, इरादे के साथ, विचारपूर्वक सोद्देश्य, निश्चित और सुचिंतित बताए गये इसके अन्य अर्थ सचेत, चौंकना, सावधान, विवेकशील, सोच–समझकर फैसला करने वाला, बताए हैं[3], अर्थात, विमर्श का अर्थ सलाह करना, बहस करना, विचार–विमर्श, सोच–विचार, सलाह–मंत्रणा, वाद–विवाद, धीरता सतर्कता है।

वास्तव में विमर्श शब्द सोच विचार, विचार–विनिमय,चिन्तन मनन, विवेचन, को द्योतित करता है। विमर्श ही समकालीन उपन्यासों की शक्ति है। साहित्य में 1960 के बाद विमर्श की अवधारणा दृष्टिगत हो रही है। साहित्य के सन्दर्भ में विमर्शमूलक चिन्तन की संकल्पना आधुनिक काल की देन है। विगत दो दशकों से विमर्श की संकल्पना साहित्य मीमांसा में प्रयुक्त हो रही है। विविध विमर्शमूलक विचारों का अंकन हिन्दी के समकालीन उपन्यासों में विस्तार से हुआ है।[4] आधुनिक काल में विमर्शवादी अवधारणा के अन्तर्गत उत्तर आधुनिक विमर्श, स्त्री विमर्श, झुग्गी झोंपड़ी विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, सत्ता विमर्श, शिक्षा विमर्श, सेक्स विमर्श, श्रमिक विमर्श, बाज़ार विमर्श, पंजाबी संस्कृति विमर्श आदि का समकालीन उपन्यासों में विश्लेषण किया गया है।

विखंडन विषयक विचार चिन्तन आधुनिक काल की देन है। विखंडन एक वृत्ति भी है और एक विचार दर्शन भी। इस विचार दर्शन से प्रभावित हो कर पात्र विघटनकारी व विनाशकारी मानसिकता के होते हैं। विखंडन एक ऐसा क्रिया भाव है जिसमें विनाश की अपेक्षा विनाश,जोड़ने की अपेक्षा तोड़ना, बनाने की अपेक्षा बिगाड़ना, रोंपने की अपेक्षा काटना, समेटने की अपेक्षा बिखेरना, जुटाने की अपेक्षा बांटना का भाव निहित होता है। मनुष्य के आचरणगत व्यवहार का नाम साहित्य है, आचरणगत व्यवहार कभी समान नहीं हुआ करता। परिवेश उसके परिवर्तन को गति प्रदान करता है।

यह परिवर्तन कभी विकासोन्मुख हो सकता है कभी विनाशोन्मुख, कभी लाभदायक हो सकता है तो कभी हानिकारक, कभी सकारात्मक हो सकता है तो कभी नकारात्मक। समाज में उन्नति–अवनति, लाभ–हानि, सकारात्मक–नकारात्मक, रचनात्मक–विध्वंसक वृत्तियों के कारण समाज में विखंडन प्रवृत्ति बढ़ती जाती है।[2] अपमान, अभाव, अप्रेम, अव्यवस्था, उपेक्षा, सता, स्पर्धा, हिंसा, कुसंग आदि के प्रभावस्वरूप विखंडन मनुष्य के स्वभाव का अंग बन जाता है।

विखंडन शब्द नकारात्मक सोच विचार व व्यवहार का द्योतक है। अव्यवस्था व बिगड़ैल माहौल विखंडन को जन्म देता है। कुसंगति व्यक्ति को प्रभावित करती है ऐसी कुसंगति के परिणामस्वरूप व्यक्ति विखंडनवादी मानसिकता का शिकार हो जाता है। स्वार्थ व लालच व्यक्ति के आचरण को विखंडित करने का सबसे महत्वपूर्ण कारण है। स्वार्थ पूर्ति के निमित्त अपने सम्पर्क में आने वाले को विखंडित करने में तनिक भी हिचकिचाता नहीं तथा किसी भी हद तक पहुंच सकता है। वर्तमान जटिल तथा बदलते हुए परिवेश के कारण विखंडनवादी विचार साहित्य में उभर कर सामने आ रहे हैं। पात्रों के आचरण व व्यवहार को लेकर नकारात्मक व विध्वंसक कार्य के सम्बन्ध में जसे विचार चिन्तन प्रस्तुत हो रहा है, वही विखंडन विमर्श है।

मूल्य की टूटन,भ्रष्टाचार, अनाचारपूर्ण व्यवहार विखंडनवादी मानसिकता को जन्म देते हैं। विखंडनवादी मानसिकता कभी कभी व्यक्तिगत जीवन की कुंठाओं के कारण उभरती जाती है। जीवन की अर्थहीनता का बोध भी विखंडित विचारों को जन्म देता है। अर्थाभाव और अनमेल दाम्पत्य जीवन जीने वालों पर भी विखंडित विचारों का प्रभाव हुआ करता है। मानव व्यवहार के विखंडन का घिनौना चित्रण भीष्म साहनी के 'तमस' उपन्यास में मिलता है। लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाकर उन्हें भड़काने के लिए विखंडनवादी मानसिकता के कारण सूअर को मरवा कर मस्जिद के सामने फेंकवाया जाता है। सामाजिक माहौल को बिगाड़ने की मानसिकता ही विखंडित मानसिकता है।[5] सदियों से साथ साथ रहने वाले हिन्दू मुस्लिम समाज के लोग एक दूसरे को शक की निगाहों से देखने लगते हैं। हिन्दू लोग मुसलमान के इलाकों में रहना खतरा समझते हैं तो मुसलमान हिन्दुओं व सिक्खों के मुहल्ले में रहना नहीं चाहते। लोग अल्प मूल्य में अपना घर बार बेचकर अपने सगे साथियों के साथ अपनी जाति के लोगों के साथ रहना पसन्द करते हैं। इस उपन्यास का बाबू पृथ्वीचन्द कहता है कि अगर अमन और शान्ति स्थापित हो जाये तो कोई अपना मुहल्ला नहीं छोड़ेगा। किन्तु उसकी यह बात मुंशीराम को असंभव लगती है। वह कहता है:–' अब हिन्दुओं के मुहल्ले में न कोई मुसलमान रहेगा और न मुसलमानों के मुहल्ले में कोई हिन्दू। इसे पत्थर पर लकीर समझो। पाकिस्तान बने या न बने ,अब मुहल्ले अलग अलग होंगे,साफ बात है।'[6] उक्त कथन से प्रतिध्वनित होता है कि उस समय समाज में विखंडनवादी मानसिकता का वातावरण दृष्टिगत हुआ है जिस के कारण मुंशी अलग–अलग मुहल्ले बनाने का आग्रह करता है।

विखंडनवादी मानसिकता कभी कभी व्यक्तिगत जीवन की कुंठाओं के कारण उभरती जाती है। जीवन की अर्थहीनता का बोध भी विखंडित विचारों को जन्म देता है। गुलशेरखान शानी के 'काला जल 'उपन्यास का नायक कभी कभी आत्महत्या करने की सोचता है और कहता है: 'मान लो बिना कुछ लिए दिए बिना ही निकल पड़ूं और कभी न लौटूं। अगर उसी आवेश में मां बाप के नाम एक चिट्ठी लिखी जाए और चुपचाप किसी कुएं या बावली में––।'[7] बब्बन की यह मानसिकता उसके विखंडित विचारों को व्यक्त करती है।

अर्थाभाव और अनमेल दाम्पत्य जीवन जीने वालों पर भी विखंडित विचारों का प्रभाव हुआ करता है। व्यक्तिगत जीवन अनुभव अगर सन्तोषजनक न हों तो विखडन की प्रवृत्ति वृद्धिगत होती है। विवेच्य उपन्यास में इन्हीं विचारों को वाणी मिली है कि एक सुनार अपनी पत्नी के चरित्र पर सन्देह करता है, सन्देह की अवस्था में मारपीट भी करता है। पति के व्यवहार से तंग आई पत्नी कहती है कि ''मार डाल! जान से ही खत्म कर दे! तेरे जैसे पापी से तो छुटकारा मिले। हरामी जब दम नहीं था, तो शादी का शौक क्यों चर्राया था। पापी, हत्यारा।'[8] पति के आतंक से पीड़ित पत्नी का यह कथन उसके विखंडनवादी विचारों का परिचायक है।

समकालीन परिवेश विशेषतः सामाजिक परिवेश ध्वंसकारी मानसिकता को ही नहीं अपितु अजनबीपन और अलगाव आदि मानसिकता को भी जन्म देता है। मनोहर श्याम जोशी के उपन्यास 'कुरु कुरु स्वाहा' में जोशी के दूर के रिश्ते की बहिन अपने पति की नौकरी के कारण विदेश में रहती है। उसे विदेश में रहना अच्छा नहीं लगता परन्तु फिर भी भारत के सामाजिक व सांस्कृतिक बदलाव से नाराज हो का विदेश ही रहती है, उसके शब्दों में –'' अपनों के बीच अजनबी रहने से तो अजनबियों के बीच अजनबी रहना क्या बुरा है।'[9] जोशी की बहन विखंडनवादी मानसिकता का ही द्योतन करती है।

सामाजिक माहौल के साथ साथ फिल्मी माहौल ने भी विखंडन की वृति को जन्म दिया है। इससे नई पीढ़ी बरबाद हो रही है। सुरेन्द्र वर्मा के 'मुझे चांद चाहिए' उपन्यास में नायिका वर्षा वसिश्ठ का प्रेमी हर्ष व्यसनों का शिकार हो जाता है। हर्ष के व्यवहार में विखंडनवादी प्रवृति दृष्टिगत होती है। फिल्म एकटर का कोर्स पूरा करके आए हर्ष से वर्षा से मिलने जाती है तो रामदेव नामक प्रशिक्षक हर्ष की ज्ञात सच्चाई को निम्न शब्दों में प्रकट करता है–'' किसी तरह निभा रहा हूं। राम राम करके यह बैच निकल जाएं। सुबह नौ बजे से हमारी क्लास शुरु होती है। परसों साढ़े आठ बजे से उन्हें जगाना शुरु किया। साढ़े आठ बजे उठने लायक हुए। दिन रात तो उनकी टिप चलती है। क्लासों के बीच मुझे धुकधुकी लगी रहती हैकि पता नहीं कब यह लुढ़क जाए। तजहां तक पैसे का सवाल है –सड़कों तक से उधार लै रखा है। बल्कि एक एक दो डग्स की आदत लगाए दे रहै है।''[10] प्रशिक्षक रामदेव का कथन हर्ष के जरिए वर्तमान पीढ़ी के व्यवहार को रेखांकित करता है जो विखंडनवादी बनती जा रही है।

दूसरों को अकारण उपेक्षित, व्यथित और अपमानित करने वाला समाज भी विखंडनवादी मनोवृति प्रदान करता है। भगवान सिंह के 'अपने अपने राम' उपन्यास में इन्हीं विचारों का परिचयात्मक विवरण मिलता है। वाल्मीकि द्वारा जाबालि से यह पूछने पर कि क्या सभ्य समाज हमारे समाज से अच्छा है, जिसे अपने पास प्रतिभा और शास्त्रज्ञान होते हुए भी अपमान और उपेक्षा से रहना पड़ता है। जाबालि वाल्मीकि से कहता है:–''वह समाज ऐसे पशुओं का है जिसमें अहंकार वश भी लोग काटते और दंश मारते हैं। वह एक टूटा हुआ समाज है जिसका हर टुकड़ा अपने को पूरा और दूसरों से बड़ा सिद्ध करने के लिए उससे टकराता,उसे तोड़ता और स्वयं भी टूटता रहता है।''[11] जाबालि के कथन से विखंडनवादी मानसिकता के फैलने के कारणों पर प्रकाश डाला गया है।

क्रोध विखंडन का ही एक हिस्सा है। जब वह सीमाओं को तोड़ता है तब वह विवेक को निगल जाता है, आदमी के चरित्र को विगलित कर देता है। क्रोध के कारण अखंडित को खंडित व विखंडित किया जाता है। भगवान सिंह के 'अपने अपने राम' उपन्यास के राम अपने भाई राम से कहते हैं–''क्रोध में विवेक नहीं रहता, इसलिए बलाबल का ज्ञान भी क्षीण हो जाता है। एक जलते हुए अंगारे की तरह।[12] इस कथन से स्पष्ट होता है कि गुस्सा विखंडन का कारण बन जाता है जिससे ज्ञान और विवेक क्षीण हो जाता है।

सता और अधिकार की अति होना विखंडित मानसिकता की स्थिति तक पहुंचाने का माध्यम है। अधिकार का केन्द्रीकरण होने से कभी कभी उसका दुरुपयोग हो जाता है जिसकी परिणति विखंडन के रूप में होती है। ज्ञान चतुर्वेदी के 'बारामासी' उपन्यास में स्कूल में बढ़ती अनुशासनहीनता विखंडन की द्योतक है। शिक्षण संस्थाओं का

कार्यभार व सता सूत्र रिश्ते नातेदारों के हाथ में होने से उनमें नियम लागू नहीं हो पाते। 'बारामासी' उपन्यास के हैडमास्टर के शब्दों में –''यहां तो पूरी नौकरी ही बड़े लोगों के भतीजों भानजों की टहल में गुजरी है––छोटी सी बात है। ––हो जायेगी। यहां तो बेनीबाई के कोई नहीं है वे भी नही पढ़ा रहे हैं, तो हम इनसे तो खैर कहेंगे क्या––। इनका स्कूल है। जब आएं। जब जाएं। इनकी मर्जी।''[13] हैडमास्टर का कथन सताधारियों के भाई–भतीजावाद से शिक्षा जैसे क्षेत्र में भी विखंडन की स्थिति को स्पष्ट करता है।

इस उपन्यास की पात्रा नमिता की सहेली ममता प्रत्यक्ष प्रमाण है जब नमिता अपनी सहेली ममता से मिलने जाती है तब नमिता की मां अपनी बेटी के बारे में कहती हैः–'' चोरी छिपे ममता डग लेने लगी है। केमिकल, स्पैस्मोप्रॉक्सिम, नाइटोजन आदि – रात पढ़ाई के बहाने। शक तो मुझे साल भर से हो रही था। उसके विचित्र आचार व्यवहार देख। कहीं कुठ गड़बड़ है उसके संग। लेकिन कभी किसी डग रोगी को देखा होता तब सन्देह को न आधार मिल पाता।''[14] ममता कुसंगति के परिणाम पढ़ाई के बहाने रात को चोरी छिपे ममता डग लेना तथा उसके आचरण व व्यवहार में विचित्रता का आना विखंडन का द्योतक है।

स्वार्थ व लालच व्यक्ति के आचरण को विखंडित करने का सबसे महत्वपूर्ण कारण है। स्वार्थ पूर्ति के निमित अपने सम्पर्क में आने वाले को विखंडित करने में तनिक भी हिचकिचाता नहीं तथा किसी भी हद तक पहुंच सकता है। चित्रा मुद्गल के 'आवां' उपन्यास के पात्र संजय कनोई प्रत्यक्ष प्रमाण है। नमिता उद्योगपति संजय कनोई से सम्बन्ध स्थापित करके गर्भ धारण करती है। कुंआरी मां अपनी पढ़ाई में खलल पैदा करने की सोच उद्योगपति संजय के समक्ष प्रकट करके गर्भपात करवाना चाहती है। उद्योगपति संजय कनोई व निर्मला विवाह के तेरह साल बाद भी बच्चे को जन्म नहीं दे पाते। उद्योगपति संजय नमिता के गर्भ धारण करने पर उसे शादी का आश्वासन भी देते हैं। नमिता को गर्भपात करवाना से रोकते हुए कहते हैः–''न––तुम मेरे बच्चे को हाथ नहीं लगाओगी ! तेरह साल बाद ––तेरह साल बाद मैं बाप बना हूं ।किसी मर्द के लिए बाप बनना क्या होता है––सात जन्म ले कर भी तुम महसूस नहीं कर पाओगी।''[15] संजय कनोई बाप बनने के लालच में नमिता को समझाता ही नहीं अपितु धमकाता भी हैः–'''देखो, मेरे बच्चे के संग तुमने आवेश में आकर कोई छेड़छाड़ की––मेरी चेतावनी को कोरी गीदड़ धमकी न समझान–तंदूर कांड हो जायेगा।'[16] उक्त कथन इस विचार का संकेत देता है कि स्वार्थ पूर्ति से आदमी के व्यवहार में विखंडन की वृति का संचार होता है। संजय कनोई परिणाम की चिन्ता किए बिना किसी भी स्तर पर पहुंचने के लिए विधि निषेध की चिन्ता नहीं करता।

स्वार्थ व लालच भी व्यक्ति के विखंडित होने के एकमेव कारण हैं। जातिवादी मानसिकता व धर्मान्धता भी विखंडनवादी विचारों को जन्म देती है। धार्मिक उन्माद से विनिर्मित विखंडन कमलेश्वर जी ने 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में रेखांकित है। 1947 में भारत पाकिस्तान के विभाजन के समय नरसंहार हुआ। इस उपन्यास में अदीब की अदालत में लहू–लुहान 1947 आकर खड़ा होता है। नरकांड का ब्यान कमलेश्वर जी ने किया हैः–''और उसी के साथ उपर आसमान से गिद्दों के झुंड उतरने लगे जिससे अंधियारा छा गया। पंजाब से ले कर आसाम तक की नदियों का पानी खून से लाल हो गया। करोड़ों लाशें जश्न मचाती हुई पैशाची नृत्य करने लगी।लाशों और घायलों के सीने पर चढ़ कर उधर जिन्ना आज़ाद पाकिस्तान का और इधर नेहरू आज़ाद हिन्दोस्तान का झंडा फहराने लगे।''[17] लेखक का कथन विखंडनपूर्ण व्यवहार का द्योतक है।

स्वार्थ की पूर्ति के लिए स्पर्धा करना किसी सीमा तक उचित हो सकता है किन्तु स्वार्थ और स्पर्धा दोनों सीमा को तोड़ते हैं तब विखंडन की स्थिति पैदा होती है। कमलेश्वर जी ने 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास में अफ़गानी मुजाहिद्दीन के शब्दों में इस स्थिति को प्रकट किया हैः–'' हम भी इन्सान की औलाद की तरह मासूम पैदा हुए थे पर सता व साम्राज्य की स्पर्धा ने हमें हितों के लिए दरिन्दों में बदल दिया। हमें कोई हुनर नहीं आता, हम तो बस मौत का खेल खेलने का हुनर आता है। काश! हमें कुछ और सिखाया होता तो हम भी खेत खलिहानों, कारखानों में काम का रहे होते, कहते–कहते एक अफ़गानी रो पड़ा।''[18] इस कथन से स्पष्ट है कि स्पर्धा की मानसिकता विखंडन को जन्म देती है। सत्ता व साम्राज्य की स्पर्धा ने इन्सान को दरिन्दगी में बदल दिया है।

अपने मनोनुकूल न होने पर व्यवस्था के प्रति विद्रोह की और आतंक फैलाने की मानसिकता भी विखंडन को जन्म देती है। चन्द्रकांता के 'कथा सतीसर' में कश्मीर में फैले आतंकवाद ने निरपराध बच्चों, बूढ़ों और औरतों को भी गोली का शिकार बनाया। इस उपन्यास की मंगला जानती है कि ''एक आग सुलग रही है अन्दर ही अन्दर। यह आग भात पकाने के काम नहीं आयेगी और न ठंडे जिस्मों को राहत देगी।यह आतश चिनार का आतश नहीं है, ज्वालामुखी का सुलगता लावा है,जो धीरे धीरे उबल रहा है। कब कहां कर जायेगा, कोई नहीं जानता,मौसम के जानकार भी नहीं।''[19] उक्त कथन से समझने में देर नहीं लगती कि आतंकवादी माहौल के कारण विखंडन की स्थिति उत्पन्न होती है।

अव्यवस्था व बिगड़ैल माहौल विखंडन को जन्म देता है। मैत्रेयी पुष्पा के 'विज़न' उपन्यास का पात्र आलोक देश की वैद्यक कुव्यवस्था से तंग आ कर विदेश चला जाता है। विदेश में अच्छा खासा पैसा कमाता है लेकिन मां बाप बेसहारा बन जाते हैं–'' मां बाप ढलती उम्र के राहगीर आलोक को पुकारे तो कहां। बेटा इस देश के जंजालों से रिहा होकर चला गया। यहां के झूठे ,बेईमानियों, समझौतापरस्त नीतियों से युक्त हो गया। अच्छा हुआ या बुरा हुआ बूढ़ों का कारगर नहीं टूटने वाला।''[20] आलोक के जीवन में अव्यवस्था के परिणामस्वरूप जो घटना घटित हुई परन्तु उसके वृद्ध मां बाप बेसहारा होना पड़ा। मां बाप के जीवन में अव्यवस्था विखंडन व टूटन का वातावरण प्रदान करने वाली सिद्ध हुई।

वर्तमान रचनाकारों भीष्म साहनी, गुलशेरखान शानी, मनोहर श्याम जोशी, सुरेन्द्र वर्मा, भगवान सिंह, ज्ञान चतुर्वेदी, चित्रा मुद्गल, कमलेश्वर, चन्द्रकांता, मैत्रेयी पुष्पा के चिन्तन से स्पष्ट होता है कि समाज में एक ओर विखंडित विचार पनप रहे हैं तथा दूसरी ओर विखंडित परिवेश भी। अव्यवस्था व बिगड़ैल माहौल विखंडन को जन्म देता है। स्वार्थ व लालच व्यक्ति के आचरण को विखंडित करने का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण है। सत्ता और अधिकार की अति व कुसंगति से व्यक्ति विखंडनवादी मानसिकता का शिकार हो जाता है। दूसरों को अकारण उपेक्षित, व्यथित और अपमानित करने वाला समाज भी विखंडनवादी मनोवृत्ति प्रदान करता है। सामाजिक माहौल के साथ साथ फिल्मी माहौल ने भी विखंडन की वृत्ति को जन्म दिया है। अर्थाभाव और अनमेल दाम्पत्य जीवन जीने वालों पर भी विखंडित विचारों का प्रभाव हुआ करता है। जीवन की अर्थहीनता का बोध भी विखंडित विचारों को जन्म देता है। विखंडन की मानसिकता विकास की अपेक्षा विनाश की ओर अग्रसर हो रही है। आचार,विचार व व्यवहार में विखंडन की वृत्ति समकालीन परिवेश की परिणति है। समकालीन उपन्यासों के माध्यम से स्पष्ट होता है कि विखंडन वर्तमानकालीन वातावरण का ही परिणाम है। यह विखंडन व्यक्तिगत, सामाजिक व शासकीय स्तर पर भी दिखई देता है। अवहेलना, उपेक्षा ,स्वभावगत भिन्नता, स्वच्छन्दतावादी व्यवहार का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। सामाजिक परिवेश के परिणामस्वरूप ही विखंडन की प्रवृत्ति पनप रही है जो स्वस्थ सामाजिक माहौल प्रदान करने के लिए एक कड़ी चुनौती बन गई है।

सन्दर्भ ग्रन्थः–

1. रामचंद्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पृष्ठ 77
2. नवल जी, नालन्दा विशाल शब्द सागर,, पृष्ठ 1276
3. सत्य प्रकाश, बलभद्र प्रकाश, मानक हिन्दी अंग्रेजी कोश,, पृष्ठ 355

4. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2008।
5. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2002।
6. भीष्म साहनी,तमस, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, 1972,पृ 244।
7. गुलशेरखान शानी, काला जल, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, 1973पृ 194।
8. वही पृ 194।
9. मनोहर श्याम जोशी, 'कुरु कुरु स्वाहा', राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, 1980 पृ 286।
10. सुरेन्द्र वर्मा ,मुझे चांद चाहिए', राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली, 1993,पृ 510।
11. भगवान सिंह, 'अपने अपने राम', वाणी प्रकाशन,नई दिल्ली, 1998,पृ 55।
12. वही पृ 115।
13. ज्ञान चतुर्वेदी, 'बारामासी', राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, 1999,पृ 218।
14. चित्रा मुद्गल, आवां ,सामयिक प्रकाशन,नई दिल्ली, 1999,पृ 457।
15. वही पृ 523।
16. वही पृ 526।
17. 17 कमलेश्वर, 'कितने पाकिस्तान', राजपाल एंड सन्स, दिल्ली, 2000,पृ 106।
18. वही पृ 185।
19. चन्द्रकांता ,कथा सतीसर', राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली, 2001,पृ 471।
20. मैत्रेयी पुष्पा,'विज़न' ,पृ 207

Net sources

1. www.bharatdarshan.co.nz/.../kamleshwar-hindi-writer
2. www.abhivyakti-hindi.org/aaj_sirhane/2004/aawan.htm
3. http://en.wikipedia.org/wiki/Surendra_Verma
4. maitreyipushpa.com/career.html